10 प्रतिनिधि कहानियाँ

AM 0405080 Code I-H-28793 Vol 39

13 COLUMBIA UNIVERSITY

आपकी छोटी लड़की

"टुनिया, ज़रा भागकर चिट्ठी डाल आ।"

"टुनिया, ठंडा पानी पिला।"

"मैंने गैस पर दूध चढ़ाया है, तू पास खड़ी रह टुन्नो! कुछ करना नहीं है। जब दूध उफनने लगे, तब तू गैस बंद कर देना।"

दिन-भर दौड़ती है टुनिया। स्कूल से आकर होमवर्क करती है, थोड़ा-बहुत खाना खाती है और इसके साथ ही शुरू हो जाता है काम पर काम पर काम। घर के टेढ़े से टेढ़े और सीधे से सीधे काम सब टुनिया के ज़िम्मे। टुनिया बाज़ार से लकड़ी लाएगी, टुनिया पौधों में पानी देगी, टुनिया ममी को दवाई देगी, टुनिया बाहर सूख रहे कपड़े उठाएगी, टुनिया दस बार दरवाज़ा खोलेगी, दस बार दरवाज़ा बंद करेगी। अगर पड़ोसिन आंटी से पंद्रह दिन पहले दी गई कटोरी मँगानी है तो टुनिया ही जाएगी। वह इतनी बहादुर है, जो जाकर सीधे-सीधे कह दे, "आंटी, वह कटोरी दे दीजिए। वही, जिसमें हम सरसों का साग दे गए थे आपको।"

अचानक मेहमान आ जाएँ तो बर्फ माँगने केरावाला मेमसाब के पास टुनिया ही जाएगी। और किसकी मजाल, जो उस बदमिज़ाज औरत को पटाकर उसके फ्रिज़ से बर्फ निकलवा सके।

टुनिया है तो तेरह की, पर लगती है ग्यारह की। न उसे दूध पीना अच्छा लगता है, न अंडा खाना। हलका-फुलका बदन है उसका। कमर इतनी छोटी कि स्कूल यूनिफॉर्म की स्कर्ट खिसकी पड़ती है। ज़रा भागे तो ब्लाउज़ स्कर्ट के बाहर। इसीलिए टुनिया को बैल्ट लगानी पड़ती है या फिर स्कर्ट में तीन-तीन जगह हुक फँसाने के लिए लूप। स्कूल जाने के लिए तो बाकायदा तैयार होना ही पड़ता है, टाई भी लगानी पड़ती है, जूते भी चमाचम चाहिए। पर वैसे टुनिया को ढंग से कपड़े पहनने का धीरज कहाँ! जो हाथ आया, गले में डाल लिया। घर में सभी के बाल कटे हुए हैं—ममी के, दीदी के। यहाँ तक कि कोलीन के भी। कोलीन

सुबह-शाम आती है, डस्टिंग करती है, कपड़े इस्तरी करती है और रसोई में खाना बनाने के पूर्व की तैयारी। खाना उससे नहीं बनवाया जाता। ममी कहती हैं कि वह पकाएगी तो छूत लग जाएगी। टुनिया को यह ज़रा भी समझ नहीं आता है कि यह छूत कैसे लग सकती है? जैसे कोलीन आटा गूँधे, सब्ज़ी काट दे तो ठीक, लेकिन वही सब्ज़ी यदि छौंक दे तो छूत, वही आटा अगर सेंक दे तो छूत। कोलीन है बड़ी फैशनेबल। नाक-भौं सिकोड़ते हुए बता चुकी है कि अगर उसके बाप को दारू का इतना लालच न होता तो वह कभी काम करने न निकलती, वह भी घर-घर।

कोलीन तीन घरों में जाती है। वह इतना पाउडर लगाती है कि पड़ोस के देवराज ने उसका नाम 'पाउडर एंड कंपनी' रख छोड़ा है। कोलीन ऊँची-सी फ्रॉक पहनती है और ऊँची सैंडिल। उसका शरीर भी कई कोण से ऊँचा-ऊँचा लगता है। हर इतवार वह चर्च जाती है और हर शनिवार पिक्चर। कभी उसके बालों में नया क्लिप होता है, कभी स्कर्ट की जेब में नया रूमाल। बगल वालों की आया मेरी जब पूछती है, 'कहाँ से लिया?' तो कोलीन आँखें मटकाकर कहती है, 'हमारा बॉयफ्रेंड दिया···।'

टुनिया को कोलीन पसंद नहीं है। उसे लगता है, कोलीन अच्छी लड़की नहीं है। जिन बातों पर टुनिया को गुस्सा आता है, उन पर कोलीन खिलखिलाकर हँस पड़ती है। हर समय मस्ती-सी चढ़ी रहती है उस पर। फैशन और पिक्चर के सिवा उसे कुछ नहीं सूझता। वह बाकायदा ऐक्टिंग करके पिक्चर की कहानी सुनाती है, भले ही कोई सुने, चाहे न सुने। उसका इस तरह मटकना टुनिया को नापसंद है। वह कई बार ममी से कह चुकी है, "इसकी छुट्टी क्यों नहीं कर देतीं?" पर ममी हर बार एक ही सुर पर बात खत्म करती हैं, "टुन्नो, तू तो सुबह तैयार होकर चल देती है स्कूल। बेबी को टाइम नहीं मिलता। रह गई मैं। तो भई साफ बात है, मुझसे इतना काम होता नहीं। कोलीन भी मदद न करे तो मैं मर जाऊँ।"

ममी मरने-जीने के सवाल न जाने कहाँ से ले आती हैं—बात-बात पर। अभी जब जबलपुर से माधुरी आंटी आई थीं और छुट्टियों में टुनिया को साथ ले जाना चाहती थीं, ममी ने कहा, "न बाबा न! टुनिया को मैं नहीं भेज सकती। एक तो कोलीन छुट्टी पर गई हुई है, ऊपर से तू इसे ले जाएगी। मुझसे नहीं होता इतना काम। मैं तो जीते-जी मर जाऊँगी।"

माधुरी आंटी अकेली वापस चली गई थीं, हालाँकि टुनिया मन ही मन बहुत

तरसी थी साथ जाने के लिए। कैसा होगा जबलपुर, उसने मन ही मन सोचा था। अपनी किताब में उसने भेड़ाघाट के बारे में पढ़ा था। वह वहाँ जाकर मिलान करना चाहती थी कि किताबें कितना सच बोलती हैं। पर ममी को वह कैसे मर जाने दे!

ममी की खातिर तो वह सारा दिन भागती है। कई ऐसे भी काम करती है, जो उसे कतई पसंद नहीं। मसलन, पाल साहब के यहाँ जाकर पापा को फोन करना, नल बंद होने पर निचली मंज़िल पर डॉ. जगतियानी के घर से पानी लाना, बाज़ार से काँदाबटाटा खरीदना और सामान ममी को पसंद न आने पर उसे वापस करने दुकान पर जाना। ममी उससे दुनिया-भर का सामान मँगाएँगी, फिर उसमें मीन-मेख निकालेंगी, "साबुन में तू दस पैसा ज़्यादा दे आई है, बट्टी लेकर वापस वोहरा के पास जा और कह, हमें नहीं लेना साबुन। लूट मची है क्या, जो दाम मन में आया, ले लिया। टुन्नो, इतनी बड़ी हो गई तू, अभी तक अदरक खरीदने की अक्ल नहीं आई। यह एकदम दो कौड़ी की अदरक है, गट्ठे वाली। अदरक तो एकदम बादाम जैसी आ रही है आजकल।"

अब टुनिया क्या जाने अदरक बादाम जैसी कैसे होती है। उसे तो अदरक एकदम नीरस चीज़ लगती है, खाने में भी और देखने में भी। एक बार खरीदकर वापस करना क्या इतना आसान होता है! पसीना आ जाता है। कार्टून अलग बनता है।

छुट्टी वाले दिन एक दोपहर घर में पानी एकदम खत्म था। ममी ने झट से कह दिया, "टुनिया, एक छोटी बालटी पानी नीचे से ले आ, कम से कम चाय तो बने।"

डॉ. जगतियानी के यहाँ नल के साथ-साथ हैंडपंप भी लगा है। निचली मंज़िल होने की वजह से उनके यहाँ पानी हर वक्त आता है। डॉ. और मिसेज़ जगतियानी दोनों सुबह अपने क्लिनिक पर जाते हैं। दोपहर ढाई-तीन तक लौटते हैं। लौटकर खाने के बाद वे सो जाते हैं—एयर कंडीशनर चलाकर। उनके घर की पूरी देखभाल उनका नौकर रामजी करता है। वही फोन सुनता है, कॉलबेल बजने पर दरवाज़ा खोलता है, कार साफ करता है और खाना बनाता है। सारी शाम जब डॉक्टर साहब और मिसेज़ जगतियानी क्लिनिक पर होते हैं, रामजी टी. वी. देखता है। यह उसका रोज़ का काम है। टी. वी. को वह टी. बी. कहता है। एक-एक एनाउंसर को वह पहचानता है। उसने सबको नाम दे रखे हैं, 'फर्स्ट क्लास', 'सेकंड क्लास', 'चलेगा' और 'खटारा'।

उस दिन टुनिया पीतल की छोटी बालटी लेकर नीचे पहुँची तो डॉक्टर साहब के घर का पिछला दरवाज़ा खुला था। टुनिया सीधे अंदर पहुँच गई। टोंटी खोलकर देखा, पानी नहीं था। फिर उसने हैंडपंप चलाया। वह भी सूखा पड़ा था। तभी रामजी रसोई में से निकलकर आया, "आज पानी नहीं है, सब खलास।"

टुनिया ने एक बार और नल खोलने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि रामजी ने अपने पाजामे की ओर इशारा किया और अश्लील ढंग से मुस्कराकर कहा, "लो, इससे भर लो।"

टुनिया कुछ समझ नहीं पाई; पर जो कुछ उसने देखा, उससे घबराकर वह दहशत से चीखती भाग खड़ी हुई। बालटी वापस उठाने का किसे होश था!

बेतहाशा भागती टुनिया तीसरी मंज़िल पर घर में घुसी तो ममी की घुड़की पड़ी, "पानी नहीं लाई न, अब पीना शाम की चाय। काम तो कोई करना ही नहीं चाहता आजकल। एक कोलीन है, उसे कुछ कहो तो वह मुँह बनाती है। एक तू है, तेरे अलग नखरे। जो करूँ, मैं करूँ; जहाँ मरूँ, मैं मरूँ।"

टुनिया का मन इस वक्त इतना घिना और घबरा रहा था कि वह क्या न कर दे, पर माँ की भुन-भुन सुनकर भन्ना गई। ये ममी हैं, इन्हें क्या फिक्र, टुनिया पानी क्यों नहीं लाई? इनका तो बस काम होना चाहिए, नहीं तो ये मरने को तैयार बैठी हैं।

"और बालटी कहाँ फेंक आई, बोल तो सही मुँह से? हद हो गई ढीठपने की। खाली बालटी उठाकर लाने में इसकी कलाई मुड़ती है। एक हम थे। हमारी माँ ज़रा इशारा कर दे, हम सिर के बल उलटे खड़े रहते थे।"

बस, शुरू हो गया ये और इनका ज़माना। अब यह रिकॉर्ड जल्दी नहीं रुकने वाला। लकड़ी काटने से लेकर सिर काटने तक के अपने तजुर्बे सुनाए जाएँगे। नानी के सिरहाने लहराता साँप ममी ने कुचला था, लोहेवाली की सोने की तगड़ी का पता ममी ने लगाया था, चोर को सेंध लगाते सबसे पहले ममी ने देखा था। नानी की बीमारी में उन्हें कैसे सँभाला था···कैसे बताए टुनिया कि यह सब करना आसान है, बनिस्बत वापस नीचे जाने के, अपनी आँखों वह गंदी चीज़ देखने के, महज़ एक बालटी की खातिर।

दीदी के साथ तो ऐसा नहीं करतीं ममी। दीदी उनका एक भी काम नहीं करती, फिर भी उसके सामने ममी कभी शिकायत नहीं करतीं। वह तो काँदाबटाटा लेने

बाज़ार नहीं जाती, उसे पानी लेने डॉ॰ जगतियानी के यहाँ नहीं भेजा जाता, बिजली का बिल जमा करने की कतार में दीदी तो कभी नहीं लगी। दीदी सुबह आठ बजे सोकर उठती है। उठते ही हुक्म चलाने लगती है, "कोलीन, मेरे नहाने का पानी गरम करो। ममी, आलू का टोस्ट बना दो। टुनिया, इस कुर्ते के साथ का दुपट्टा ढूँढ़ दो।"

दीदी नहाने चली जाती है और घर-भर उसके कॉलेज जाने के काम में इस कदर व्यस्त हो जाता है, जैसे दीदी लाम पर जा रही हो। ममी गेट पर उसे घड़ी और रूमाल पकड़ाने भागती हैं। दीदी थैंक्यू भी नहीं कहती। बस, एक 'महारानी नज़र' सब पर डाल शान से चल देती है। अकेली कॉलेज जाती है, पर यों लगता है, मानो चार अर्दली आगे, चार पीछे चल रहे हैं। किस शान से दीदी सड़क क्रॉस करती है, आती-जाती टैक्सियों, कारों को चुनौती देती। है किसी की मजाल, जो दीदी से पूछे, 'क्यों जी, यह सड़क क्या आपके पापा ने बनवाई है? वह पैदल पारपथ क्या बटेरों के लिए छोड़ रखा है?'

टुनिया को पता है, जब दीदी कॉलेज के लिए निकलती है, कॉलोनी के आधा दर्जन लड़के तो तभी अपने-अपने घर से निकलते हैं। वे इधर-उधर छा जाते हैं, कोई पुलिया के पास, कोई चौराहे पर, कोई बस-स्टॉप पर। दीदी इन सबकी हीरोइन है। किसी ने दीदी को कॉलेज के स्टेज पर नृत्य करते देख लिया है, बस गुड्डप। किसी ने दीदी को डिबेट में बोलते सुना है, धराशायी। कोई दीदी की चाल का दीवाना है, कोई दीदी के बाल का। बच्चू सीने पर हाथ रखकर गाता है, 'उड़-उड़ के कहेगी खाक सनम···।' आबू दो साल से एल.एल.बी. में फेल हो रहा है। दीदी किसी की ओर नहीं देखती। गर्दन को एक गुमान-भरा झटका दे वह बस-स्टॉप पर ऐसे खड़ी हो जाती है, जैसे बकिंघम पैलेस की बग्घी उसके लिए आने वाली हो।

एक दिन तो आ भी गई थी—प्रिंस राजगढ़ की गाड़ी। दीदी बस-स्टॉप पर खड़ी थी कि चॉकलेट रंग की कार झटके से आकर सामने खड़ी हो गई। प्रिंस खुद ड्राइव कर रहे थे। निहायत शालीनता से बोले, "मिस सहाय, मैं भी कॉलेज जा रहा हूँ, मे आइ हैव द प्लेज़र टु ड्रॉप यू!"

दीदी ने एक नज़र उसे देखा और कहा, "सॉरी, मैं नहीं जानती आप कौन हैं!"

प्रिंस सिर झुकाकर चला गया। वह कॉलेज नहीं गया। वह इतना तिलमिला गया कि उसने उसी दिन न सिर्फ कॉलेज, वरन् शहर भी छोड़ दिया।

बहुत नाज़ है टुनिया को अपनी बहन पर। दीदी टुनिया से चाहे जो काम ले लें, टुनिया कर देगी। टुनिया दीदी के नाखून काटती है, रूमाल धोती है, बाल कंघी करती है, कमरा ठीक करती है। उस दिन टुनिया बहुत थकी हुई थी। बाज़ार के पाँच चक्कर लगाने पड़े थे। दीदी को भी बाज़ार का ही एक काम था। उसे दर्ज़ी से मैक्सी मँगवानी थी। दीदी ने अपने बालों से मोतियों के फूलों का छोटा गुच्छा निकालकर टुनिया को पकड़ा दिया। खुशी के मारे टुनिया सारी थकान भूल गई। फूलों को निहारते-निहारते वह दर्ज़ी की दुकान तक चली गई और मैक्सी ले आई। पैर बहुत दुखे, पर फूल कितने सुंदर थे!

कई बार दीदी टुनिया के हाथ में अपनी फिलॉसफी की किताब थमाकर लेट जाती है। पढ़ाई करने का दीदी का यह प्रिय तरीका है। टुनिया कांट, हीगल से लेकर अद्वैतवाद तक सब पढ़कर सुनाती है। बहुत कुशाग्रबुद्धि है दीदी। एक बार का सुना ज्यों का त्यों याद हो जाता है उसे। इसी तरह दीदी ड्रामे का पार्ट याद करती है। दीदी के साथ-साथ टुनिया को भी याद हो जाते हैं संवाद। माँ ने कहा, 'चले गए, सब के सब चले गए। छह-छह बेटे पैदा किए, छहों चले गए। अब जाकर मैं सोऊँगी, चैन से सोऊँगी। जिस दिन से ब्याही आई, एक दिन भी नहीं सोई। कभी किसी के लिए, कभी किसी के लिए जीवन प्रार्थना में बीता। आज इसकी पूजा, कल उसका उपवास। अब सब चले गए। लाख तूफान आए, अब मेरा क्या बिगाड़ लेंगे? सागर से मुझे क्या लेना और क्या देना? भले ही घर में अब भोजन के नाम पर सिर्फ एक सूखी-सड़ी मछली हो, मुझे क्या चिंता, किसकी फिक्र! मैं पैर फैलाकर सोऊँगी, भर नींद सोऊँगी।'

जे.एम. सिंज के इस नाटक में दीदी गज़ब का अभिनय करती है। हॉल में बैठे एक-एक दर्शक की आँखें डबडबाई होती हैं। टुनिया ने खुद देखा है। दीदी की खासियत यही है। चाहे उसे दिलबहार बेगम बना दो, चाहे बूढ़ी अम्मा, पात्र को जीता-जागता खड़ा कर देती है सामने। तभी तो अपने आगे निर्देशक को कुछ समझती नहीं। 'इंग्लिश एसोसिएशन' के नाटक 'एंटनी एंड क्लियोपेट्रा' का निर्देशक वह कुर्गी लड़का है जिमी। दीदी उसका कोई कहना नहीं मानती। दीदी कहती है, 'वह अपनी मर्ज़ी के अनुसार क्लियोपेट्रा के संवाद बोलेगी।' प्रोफेसर चोकसी ने हारकर कह दिया, 'शी इज़ ए बॉर्न क्लियोपेट्रा। लैट हर हैंडिल द कैरेक्टर।'

कॉलेज के वार्षिकोत्सव में दीदी की जय-जयकार होती रहती है। मुख्य अतिथि एक के बाद एक दस पुरस्कार दीदी को देते हैं। अधिकतम अंक पाने पर अंग्रेज़ी, हिंदी, फिलॉसफी और लैंग्वेज का प्रमाणपत्र तो मिलता ही है, साथ ही गायन, नृत्य और अभिनय का भी। एक पुरस्कार व्यक्तित्व के लिए, एक वक्तृता के लिए।

टेबल टेनिस शील्ड दीदी की वजह से जीती गई, उसका भी विशेष पुरस्कार मिलता है। बार-बार अपनी सीट से मंच तक जाना दीदी की शान के खिलाफ है। दीदी वहीं खड़ी है, विंग्स में, एक भक्त छात्र को अपने पुरस्कार पकड़ाती हुई। वहीं से निकलकर वह मुख्य अतिथि से पुरस्कार ग्रहण करती और वहीं खड़ी हो जाती। हॉल में सब बड़े रश्क से उसका नाम सुन रहे हैं, उसके दीदार का इंतज़ार कर रहे हैं, पर दीदी को कोई जल्दी नहीं। मंच पर जाते समय वह घबराती भी नहीं।

पुरस्कार टुनिया को भी मिलते हैं अपने स्कूल में, पर वह तो इस कदर हड़बड़ा जाती है कि प्राचार्या तक पहुँचना मुश्किल हो जाता है। घबराहट में मुँह से कभी 'थैंक्यू' पहले निकल जाता है और पुरस्कार बाद में पकड़ती है, कभी 'थैंक्यू' मुँह से निकल ही नहीं पाता, जुबान तालू से चिपककर सूख जाती है। हाथ थर-थर काँपते हैं। वही रोज़ के चेहरे होते हैं, फिर भी टुनिया कितना घबरा जाती है। दीदी बिलकुल नहीं घबराती। एकदम बाहरी आदमी है मुख्य अतिथि। पर दीदी कुछ इस अंदाज़ में उसके हाथों से पुरस्कार लेती है, मानो ले नहीं, दे रही है।

टुनिया भी बैठी है ताली बजाने वालों में। जितनी बार दीदी का नाम बुलाया जाता है, टुनिया को लगता है, उसका कद ऊँचा होता जा रहा है। उसकी इच्छा होती है, अपनी सीट पर खड़ी हो जाए और ज़ोर-ज़ोर से ताली पीटे। उसका दिमाग उसे तसल्ली और तमीज़ सिखाता है।

जलसे के बाद टुनिया दीदी के साथ घर लौट रही थी। कॉलेज से बस-स्टॉप कुछ दूरी पर था। कुछ इनाम दीदी ने पकड़े थे, कुछ टुनिया ने। टुनिया को लग रहा था, ये उसी ने जीते हैं। आखिर वही तो दीदी को संवाद याद कराती है नाटकों के, वही दीदी को फिलॉसफी, हिंदी और अंग्रेज़ी के लैसन सुनाती है।

बार-बार रास्ते में कभी कोई, कभी कोई दीदी को मुबारकबाद दे रहा था। तभी चार लड़कों के एक झुंड ने आकर दीदी को बधाई दी। फिर उनमें से एक

नाटे-से लड़के ने कहा, "मिस सहाय, हम लोगों में एक शर्त लगी है। राज कक्कड़ का कहना है, यह लड़की जो आपके साथ है, आपकी बहन है। मेरा कहना है, ऐसा हो ही नहीं सकता। बकवास करना राज की पुरानी आदत है। लेकिन मैं आपकी शान के खिलाफ इसे बोलने थोड़े ही दूँगा। आप असलियत बता दीजिए। हम लोगों में आइसक्रीम की शर्त लगी है।"

दीदी ने निहायत लापरवाही से कहा, "मेरी बहन है यह, तूर्णा सहाय।"

लड़कों के मुँह अवाक्-से रह गए। उन्होंने टकटकी लगाकर टुनिया को जाँचा, जैसे चिड़ियाघर में बच्चे ज़ेब्रा देख रहे हों।

राज कक्कड़ ने विजेता अंदाज़ में बाँहें चढ़ा लीं, "देखा न, मेरी खबर गलत नहीं हो सकती। है न धमाका?"

नाटे लड़के ने हताश स्वर में कहा, "यह आपकी सगी बहन है मिस सहाय?"

"हाँ बाबा, हाँ!" दीदी ने हँसते-हँसते कहा।

"एक ही माँ की?"

"हाँ, और एक ही पिता की भी।" दीदी ने अपनी तरफ से मज़ाक मारा, जिस पर सब हो-हो कर हँस पड़े।

टुनिया को पहली बार रोना-रोना-सा आया। कितने बेहूदा लड़के हैं! कैसे भद्दे मज़ाक करते हैं! यह क्या शर्त लगाने की बात है? कितनी बार वह दीदी के साथ कॉलेज आ चुकी है। बहन नहीं तो क्या चपरासिन है?

घर जाकर टुनिया ने किसी से कुछ न कहा, पर रुलाई एक अंधड़ की तरह मन में घुमड़ रही थी। किसी को उसकी ओर देखने का अवकाश ही कहाँ था। कोई दीदी की पीठ ठोंक रहा था, कोई उसका मुँह चूम रहा था। पापा ने दीदी से सगर्व कहा, "यू आर माइ ब्रेनी डॉटर, शाबाश!"

टुनिया को ममी ने तत्काल भेज दिया बाज़ार, लड्डू लाने। पड़ोस के घरों में लड्डू बँटेंगे, दीदी इतने इनाम जो लाई है। सबके बच्चे उसी कॉलेज में पढ़ते हैं, पर है कोई जो इतने इनाम पाए!

टुनिया घंटों घर-घर घूमती फिरी, सात नंबर, आठ नंबर, नौ नंबर। कैरावाला, जगतियानी, द्विवेदी, आलम खान। कॉलबेल बजाई, दरवाज़ा खुला, टुनिया ने हाथ जोड़े, "नमस्ते आंटी, हमारी दीदी इस साल फिर हर चीज़ में फर्स्ट आई है। ममी ने मिठाई भेजी है, नमस्ते।"

पापा ने रेडियो पर से टुनिया के स्कूली कप उठाकर ताक पर रख दिए और दीदी के बड़े कप सजा दिए। कमरा जगमगा उठा। नए कप चमकते कितने

गज़ब के हैं! अब कल फोटोग्राफर आएगा। दीदी की फोटो खिंचेगी।

रात जब टुनिया अपने बिस्तर पर लेटी, उसे न जाने कहाँ से अवश रुलाई आ गई। उसे स्पष्ट नहीं था कि वह क्यों रो रही थी, पर आँसू थे कि बहे जा रहे थे। लगातार रोने से नींद भी उड़ गई।

टुनिया दबे पाँव उठकर गुसलखाने में गई। वहाँ लगे शीशे में उसने अपना चेहरा देखा।

नहीं, इतना बुरा तो नहीं कि बरदाश्त न हो। बाल उसके दीदी से लंबे और मुलायम हैं। त्वचा भी उसकी चमक रही है। फिर उन लड़कों ने क्यों कहा कि वह दीदी की कोई नहीं? और फिर अगर लड़कों ने बदतमीज़ी की भी, तो क्या दीदी उन्हें डपट नहीं सकती थी? क्या उसका हाथ अपने हाथ में ले गर्व से नहीं कह सकती थी, 'देखो, यह है मेरी बहन, मेरी अपनी छोटी बहन, तुम्हें दिखाई नहीं देता?'

टुनिया क्या करे कि अपनी दीदी की बहन लगे? क्या गले में पट्टा लटका ले या आटे के बोरे में मुँह घुसा ले या छील डाले अपनी चमड़ी छिलके की तरह?

टुनिया को इसी तिलमिलाहट में याद आई उस लाल लहँगे की, जिसके कारण उसे कितनी मार पड़ी थी। दीदी को टाउन हॉल में एकल नृत्य प्रतियोगिता में नाचना था। उसके लिए नया लाल लहँगा, ब्लाउज़ और चूनर बनवाई गई थी। प्रतियोगिता के पूर्व दीदी दोपहर में बाज़ार गई थी—लाल चुटीला और झूमर खरीदने। पीछे से दर्ज़ी ने आकर दीदी की पोशाक दी। नई लाल पोशाक टुनिया को इस क़दर भायी कि उससे रहा न गया। उसने चाव ही चाव में अपनी फ्रॉक उतार लहँगा-ओढ़नी पहन ली। बाकायदा सिर ढककर वह माथे पर टिकुली लगा ही रही थी कि दीदी वापस।

टुनिया को काटो तो खून नहीं। हे भगवान्, दीदी ने देख लिया! अब क्या होगा?

दीदी का पारा गरम हो गया, "तूने मेरी पोशाक क्यों खराब की? बता, बता?" दीदी ने उसे झँझोड़ डाला।

"दीदी, खराब नहीं की। लो, मैं उतार देती हूँ।"

दीदी रोने बैठ गई, "ऊँ-ऊँ-ऊँ! मैं अब यह पोशाक नहीं पहनूँगी। यह गंदी हो गई।"

ममी ने दीदी से कुछ नहीं कहा। बस, टुनिया की धुनाई कर डाली, जिसके कारण दीदी की पोशाक गंदी हो गई।

टुनिया हफ्तों सोचती रह गई, क्या पोशाक इतनी जल्द इतनी गंदी हो गई कि दीदी का डांस बिगड़ गया, उसे पुरस्कार नहीं मिला और घर लौटते समय उसकी एक पायल भी खो गई?

तब से टुनिया ने गाँठ बाँधी, दीदी का कोई कपड़ा नहीं छूना है। रूमाल भी नहीं। दीदी को दुखी नहीं करना है।

रात-भर की छटपटाहट के बाद टुनिया ने तय किया कि वह लड़कों की खुराफात पर कतई ध्यान नहीं देगी। वह अपना पूरा ध्यान पढ़ने में लगाएगी। दीदी के कॉलेज अब कभी नहीं जाएगी। ममी कहेंगी, तब भी नहीं।

स्कूल में टुनिया का दिन बहुत अच्छा बीता। इंग्लिश में 'वेरी गुड' मिला, ड्राइंग में 'गुड'। खुशी के मारे बाकी पीरियड भी खटाखट बीत गए। अब आया गणित का पीरियड, होडीवाला सर की क्लास। लड़के-लड़कियों को सबसे ज़्यादा सज़ा इसी पीरियड में मिलती है। लड़कों को भी ज़बरदस्त केनिंग होती है। लंबी लचीली टहनी होडीवाला सर की क्लास का दौरा कर डालती है। सनाक्-सनाक् हथेलियों पर केन लेते लड़के रोते नहीं, पर उनके होंठ भिंच जाते हैं। टुनिया के बदन में फुरफुरी आती है, जितनी बार यह आवाज़ सुनती है वह 'सनाक्-सनाक्'।

लड़कियों को मार नहीं पड़ती। उन्हें स्कूल के बाद रुकने और पाठ लिखने की सज़ा मिलती है, 'डिटेंशन'। क्या तुक है इसमें? सवाल गलत हुआ गणित का और सज़ा में मिल गया 'आर ह्यूमन स्ट्रक्चर' को नौ बार लिखना। टुनिया को कभी यह सज़ा नहीं मिली, लेकिन जिन्हें मिलती है वे भी तो उसकी सहेलियाँ हैं। उसे पता है, लिखते-लिखते उनकी बिचली उँगली नीली पड़ जाती है।

टुनिया के सवाल कभी गलत नहीं होते, पर उसे सर का रवैया पसंद नहीं। जिस समय छात्र सवाल कर रहे होते हैं, होडीवाला सर खिड़की पर पीठ टिका गिद्ध-दृष्टि से सबको देखते रहते हैं—'नो चीटिंग'। लड़कों से निपटकर वे लड़कियों के पास आते हैं। 'लेट मी सी मिसी बाबा, वॉट हैव यू डन,' कहते हुए वे प्रत्येक मिसी बाबा का सवाल जाँचते हैं। जितनी देर वे सवाल देखते हैं, उनका एक हाथ लड़की की पीठ पर बराबर चलता रहता है, कंधे से लेकर कमर तक के हिस्से पर। हृष्ट-पुष्ट गुलगुली लड़कियों पर वे विशेष मेहरबान रहते हैं। पर लड़कियाँ

उनसे कतराती हैं। बड़ी लड़कियाँ आपस में इस बात पर भुनभुनाती हैं, पर डर के मारे कोई ज़ुबान नहीं खोलती।

टुनिया के प्रायः सभी सवाल ठीक होते हैं। शायद इसीलिए सर उसके पास कभी नहीं फटकते, जल्दी से 'राइट' लगाकर आगे बढ़ जाते हैं। दो-चार बार टुनिया ने वे सवाल भी हल कर दिखाए हैं, जो सर नहीं कर पा रहे थे। होडीवाला सर सिर्फ एस॰ टी॰ सी॰ तक पढ़े हैं। छात्र उनकी डिग्री को कहते हैं—संडास टिकट कलेक्टर। संडास जाने का टिकट कहाँ लगता है, उन्हीं से पूछने की बात है।

शनिवार को पापा ने सुबह बैठक साफ करवाई। उनकी बैठक बस टुनिया साफ कर सकती है। कोलीन को तो ज़रा भी तमीज़ नहीं। ज़रूरी से ज़रूरी कागज़ रद्दी समझ, कूड़े में बटोरकर फेंक देगी। टुनिया जानती है, कागज़ पापा की जान हैं। एक-एक चिट्ठी, एक-एक अखबार क्यों रखा हुआ है, उसे पता है। ममी तो उकता जाती हैं इस सफाई-अभियान से। उनका कहना है, जितनी देर में पूरे घर की सफाई हो, उतनी देर में केवल यह बैठक साफ होती है। एक-एक पेपरवेट को चमकाना, पोंछना, पिनकुशन में पिन खोंसना, किताबें करीने से रैक में सजाना, इस सबकी उन्हें फुर्सत कहाँ? पर टुनिया बोर नहीं होती। वह इस काम को झाड़ू और झाड़न की जुगलबंदी कहती है।

फर्श पर बिछे बिस्तर की चादर बदली गई। किताबें ठीक से लगाई गईं। रेडियो का कवर और मेज़पोश भी धुले हुए बिछाए गए। एक बहुत बड़े साहित्यकार आने वाले थे। टुनिया ने पूछा, "पापा, क्या इनका पैर उनसे भी बड़ा होगा, जो पिछली बार आए थे?"

"फिज़ूल बात मत करो।" पापा ने घुड़क दिया। पिछली बार भी उनके घर एक बड़े साहित्यकार आए थे। उनके पैर की छाप चादर पर पड़ गई थी। सफेद चादर के बीच वह मटमैली छाप बड़ी अजीब लग रही थी। बाप रे बाप, टुनिया ने सोचा था, इतना बड़ा पैर! उसके तो दो-तीन पंजे निकल आएँ इसमें से। उसने तभी सोचा था कि बड़े साहित्यकार का न केवल दिमाग, वरन् पैर भी बड़ा होता है।

पर पापा को कोई खुराफात बरदाश्त नहीं है। घर में सब स्वच्छ होना चाहिए। कायदे से कमरे में आओ, नमस्ते करो, चाय रखो और चले जाओ। अगर कमरे में कविता-पाठ चल रहा हो या गंभीर बातचीत, कभी टोको नहीं। सुनना चाहती

हो तो चुपचाप बैठ जाओ।

टुनिया किताबों की दुनिया से अनजान नहीं। किताबें उसे बेहद प्रिय हैं। वह कुछ भी और सब कुछ पढ़ डालती है, जो सामने आ जाए। यह जो साहित्यकार आने वाले हैं, श्री मुक्तिदूत, इनका उपन्यास भी उसने पढ़ा है। उसके मन में उन्हें देखने की उत्कट अभिलाषा है। टुनिया जानना चाहती है, वे दूसरे के मन की बात इतनी आसानी से और इतनी अच्छी तरह से कैसे समझ लेते हैं? क्या उनके पास डॉक्टर की तरह कोई स्टेथेस्कोप होता है?

एक और बात जो टुनिया की समझ में नहीं आती, वह यह है कि कोई साहित्यकार तो पचास पुस्तकें लिखने के बाद भी बड़ा साहित्यकार नहीं माना जाता और कोई महज़ एक पुस्तक लिखकर महान् हो जाता है। पापा थोड़ा-बहुत समझाते हैं, फिर अपना शाश्वत वाक्य बोल देते हैं, "अभी तू बहुत छोटी है।"

इतनी छोटी नहीं है टुनिया। दिल-दिमाग हज़ार-हज़ार सवालों से भरा पड़ा है। क्यों? क्यों? क्यों? उनके घर अधिकतर कलाकार और साहित्यकार आते हैं। यहाँ आने वाले तरह-तरह के लोग हैं। एक बार एक कलाकार आए थे। जेब में तीन सौ रुपए और बेशुमार उम्मीदें लिए। वे फिल्मों में संघर्ष करना चाहते थे। शक्ल से कितने भोले लगते थे! उनके घर महीनों रहे थे, इसी बैठक में। रोज़ सुबह झोला कंधे पर डाल निकल जाते, स्टूडियो दर स्टूडियो, दरबानों से गिड़गिड़ाते। रात को थकान से लस्त और हौसले से पस्त लौटते। पापा उन्हें अपने साथ खाना खिलाते और देर तक उनकी हिम्मत बँधाते।

अगली सुबह वे फिर निकल पड़ते। साढ़े तीन महीने की दौड़-धूप के बाद उन्हें एक फिल्म में भूमिका मिली, बस-स्टॉप पर खड़े एक गुंडे की, जो चाकू दिखाकर लोगों की जेबें खाली कराता है और फिर चाकू चूमकर विचित्र अट्टहास करता है, 'हा हा हा हा!' घर में चाकू चूमने और अट्टहास करने की रिहर्सल करते तो टुनिया कमरे से हट जाती। न जाने क्यों उसे लगता, यह भूमिका उस कलाकार की तौहीन थी। उसके बाद सभी फिल्मों में वे गुंडे बने। दो ही साल में वे फिल्म उद्योग के नामी विलेन हो गए। उन्होंने जुहू पर फ्लैट खरीद लिया, कार खरीद ली, शादी कर ली और पापा को पहचानने से इनकार कर दिया।

पापा को कोई खास फर्क नहीं पड़ा। न वे आहत हुए, न अपमानित। उन्होंने कुछ और साथी ढूँढ़ लिए। पर ममी किचकिचाती रहीं, "जब तक दो रोटी का

ठिकाना नहीं था, फलानेजी गले से बँधे रहे। आज रोटी-बोटी दोनों का इंतज़ाम हो गया तो कैसे आँखें फेर लीं! जाने इन्हें अकल कब आएगी! अरे, अब तो यह सदाव्रत बंद करो। आज की दुनिया में कोई किसी का नहीं। क्या मिला तुम्हें मर-मरकर?"

पापा ने एक बार भी शिकायत नहीं की। न जाने कितने लोगों को पाँच रुपए से लेकर पचास रुपए तक उधार दिए, जो डूब गए। वर्षों ममी ने घर-खर्च के रजिस्टर में इसे उचंत में डाले रखा, फिर हारकर लिखना छोड़ दिया। पापा ने कहा, "इसमें क्या झींकना। सारा जीवन ही लेन-देन है।"

ममी बोलीं, "तुम्हारा तो सारा जीवन बस देन-देन है।"

ममी को गुस्सा बहुत जल्द आता है। अच्छी बातों में भी वे न जाने कहाँ से आपत्ति ढूँढ़ निकालती हैं। इक्कीस नंबर में नए किराएदार आए थे मिस्टर पै। उस दिन उनकी लड़की विनया सामने के लॉन में दो-तीन लड़कियों के साथ खेल रही थी। टुनिया भी पहुँच गई। सबने मिलकर रस्सी कूदी, आइ स्पाइ खेला। वापस जैसे ही टुनिया घर आई, माँ ने जवाब-तलब किया, " किससे पूछकर गई थी?

" कपड़े क्यों नहीं बदले? बाकी लड़कियों के कपड़े देखे थे? एकदम परी जैसी लग रही थीं!

" हमारी नाक कटाएगी? "

लो, हो गई न सारी शाम गुड़गोबर! माँ की डाँट बरदाश्त नहीं होती और माँ ही सबसे ज़्यादा डाँटती हैं। डाँटने के बाद रोने या सुस्त पड़ने का अवकाश नहीं देतीं। खुद अपनी तबीयत खराब कर बैठ जाती हैं।

फिर शुरू हो जाता है पापा की नसीहतों का सिलसिला, "कितनी बार कहा है टुन्नो, ममी को गुस्सा न करने दिया करो, इनका ब्लडप्रेशर बढ़ जाता है।"

"तुम्हें ज़रा खयाल नहीं ममी का टुनिया! चलो, इन्हें पानी में ग्लूकोज़ पिलाओ।"

"शाम को डॉक्टर गांगुली के पास ले जाना ममी को।"

डॉक्टर ममी का ब्लडप्रेशर देखता है, दवा देता है। टुनिया ज़बरदस्त पश्चात्ताप से भर जाती है। डाँट भी उसे ही पड़ती है, अफसोस भी उसे ही होता है, डॉक्टर के यहाँ भी वही जाती है, 'सॉरी' भी वही कहती है। किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता। कोई टुनिया को इस सवाल का जवाब नहीं देता कि ब्लडप्रेशर किसका

जाँचा जाना चाहिए, जिसने डाँटा उसका या जिसे डाँट पड़ी उसका?

इन झमेलों से बिलकुल अलग-थलग दीदी एक अलग दिशा में दौड़ रही है। लगभग रोज़ शाम कोई न कोई शो चलता रहता है। शो के बाद दीदी घर आती है, मेकअप उतार, कपड़े बदल वह आँख बंद कर लेट जाती है बिस्तर पर। थोड़ी-थोड़ी देर में पापा या ममी आकर उसे देख जाते हैं। जब उसकी आँख लग जाती है तो हौले से बत्ती बंद करते हुए पापा कहते हैं, "बहुत स्ट्रेन पड़ रहा है बेबी पर। इसे रोज़ाना एक सेब दिया करो।"

हर बात दीदी से बाँटना चाहती है टुनिया। कल टुनिया ने उसे बताया, कितने बड़े साहित्यकार आने वाले हैं आज। दीदी ने कहा था, "हाय, मैं भी सुनती उनकी बातें, पर क्या करूँ, कल से तो नई रिहर्सल शुरू है। मेन रोल मेरा ही है।"

पापा सुबह से बड़े जोश में हैं। मुक्तिदूत जी के उपन्यास और काव्य-संग्रह का फिर से पारायण हो रहा है। जगह-जगह लाल पेंसिल से निशान लगाए जा रहे हैं। मुक्तिदूत जी से जमकर बहस करनी है। टुनिया भी साथ-साथ पढ़ रही है। इस कमरे का आलम अनोखा है। यहाँ बैठकर मन किताबों में रम जाता है। न समय का ध्यान रहता है, न काम का।

तभी ममी ने आकर कहा, "टुनिया, चलो सनीचरी से सामान लाने।"

टुनिया का जोश जाम हो गया।

सनीचरी का मतलब है, सूखी मछली के गँधाते ढेर, बाज़ार की कचर-पचर, धूप, पसीना, धूल, बौड़म झोले, काँदाबटाटा, गेहूँ, चावल, मसाले, पातड़भाजी, खट्टा चूका और खटारा रिक्शा। पूरी बंबई में कहीं रिक्शा नहीं चलता सिवाय इस सनीचरी के। इस रिक्शे से रूह काँपती है टुनिया की।

पहले तो बाज़ार की एक-एक दुकान पर ममी को मोलभाव करते देखो, बोलो कुछ नहीं। बस, झोले पकड़े खड़ी रहो। फिर जब ममी की तसल्ली हो जाए तो सौदा ले लो। बराबर टकटकी लगाकर तराजू देखती रहो, तरकारीवाली कहीं डंडी तो नहीं मार रही? इसी चतुराई से ममी महीने का पूरा सौदा सनीचरी से लेंगी। फिर बड़े कौशल से वे सस्ता रिक्शा करेंगी। रिक्शा करने में उनकी दो शर्तें अनिवार्य हैं। रिक्शा सस्ता हो और रिक्शेवाला विनम्र। झिक-झिक करने वालों से ममी को बहुत चिढ़ है। रिक्शे में चढ़ते ही ममी टमाटर का झोला या तेल की पीपी बगल की सीट पर रख लेंगी और कहेंगी, "टुनिया, तू यहाँ नीचे बैठ ले। टमाटर कहीं पिंच न जाएँ, तेल कहीं बह न जाए, पीपी में झाल तो लगी नहीं है। थोड़ी ही दूर की बात है।"

अगर टमाटर या तेल कुछ न साथ हुआ, तो कॉलोनी की ही कोई पड़ोसिन ममी को ज़रूर दिख पड़ेगी। ममी उसे भी रिक्शे में अपने साथ लाद लेंगी और कहेंगी, "टुन्नो, तू ज़रा किनारे पर टिक जा, यहाँ मेरे पैरों के पास। नहीं-नहीं बहन जी, आप परेशान मत होइए। हमारी बेटी तो बड़ी सीधी है, जहाँ कहो बैठ जाए, जहाँ कहो खड़ी हो जाए। बच्चों का क्या है, जैसे रखो, रह जाते हैं।"

नहीं बैठना चाहती टुनिया इस तरह। कितनी शर्म आती है उसे। स्कूल की कोई सहेली देख ले या टीचर, तो कितनी खिल्ली उड़ेगी उसकी! आठवीं में पढ़ती है। कोई बच्ची तो नहीं। वह क्या घर की नौकरानी है, जो पैरों के पास बैठे! इतना ही शौक है ममी को पड़ोसिनें ढोने का तो दो रिक्शे क्यों नहीं कर लेतीं?

टुनिया जब इस तरह बैठती है तो सामने से उसका कच्छा दिखने लगता है। कम से कम टुनिया को तो यही लगता है, उसका कच्छा दिख रहा है, बल्कि सारी दुनिया को खबर है कि दिख रहा है। 'शेम, शेम!' क्या करे टुनिया? फ्रॉक इतनी लंबी नहीं कि आगे खींच ले। पीछे से ममी की चप्पल चुभ रही है, आगे से यह मुसीबत!

बहुत बोर होती है टुनिया इस सनीचरी की कवायद से। ऊपर से गज़ब यह कि ममी इसे तफरीह का नाम देती हैं। अब अगर घर पहुँच, झोले रख टुनिया यह कहे कि वह सत्रह नंबर वाली पिन्हाज दाजी के यहाँ जा रही है तो ममी डपटकर कहेंगी, "बैठ चुपचाप। अभी घूमकर नहीं तो क्या पापड़ बेलकर आ रही है? घर में तो किसी का टिकुआ लगता ही नहीं है। जो करूँ, मैं करूँ; जहाँ मरूँ, मैं मरूँ।"

ममी एक बार बोलना शुरू कर दें तो देर तक चुप नहीं होतीं। रुक-रुककर उसी विषय पर बोलती हैं। लिफाफे खाली कर दाल डिब्बों में डाली जा रही है, भाषण चालू। गेहूँ कनस्तर में पलटा जा रहा है, भाषण चालू। काँदाबटाटा अलग-अलग टोकरियों में रखा जा रहा है, भाषण चल रहा है। धीरे-धीरे यह स्वगत-कथन में बदल जाएगा। टुनिया ममी के पीछे-पीछे कुछ इस तरह घूमेगी, मानो दोनों के बीच कोई तार जुड़ा है। ममी मुड़ेंगी तो वह भी मुड़ेगी, ममी झुकेंगी तो वह भी झुकेगी।

ममी ने चिड़चिड़ाकर एक बार फिर कहा, "सुनती नहीं है, फिर और धूप चढ़ जाएगी। जल्दी उठ।"

पापा ने किताब पर से नज़र उठाई और बोल पड़े बमककर, "क्या तुम सुबह से कुड़कुड़ शुरू कर देती हो। आटे-दाल के सिवा और कुछ पता भी है?

नहीं जाएगी टुनिया। इतने बड़े साहित्यकार आ रहे हैं। किसी भी समय आ सकते हैं। यहाँ कौन बनाएगा चाय? जाना है तो कोलीन को लेकर जाओ।''

एक कटखनी नज़र पापा और टुनिया पर डाल ममी चली गईं।

पापा द ग्रेट! टुनिया को मज़ा आ गया। कैसी बाल-बाल बची वह सनीचरी से और कोलीन क्या खूब फँसी! अभी-अभी काम निपटा वह जाने की तैयारी कर रही थी। तभी तो उसने सबकी नज़र बचाकर फूलदान से एक फूल चोरी किया था बालों में लगाने के लिए। टुनिया को सब पता है। रिक्शे में जब पटरे पर बैठना पड़ेगा, सारी शान झड़ जाएगी आज।

वह तो छूटी किसी तरह। अब जब पापा कहेंगे, वह ऐसी फर्स्ट क्लास चाय बनाएगी कि मुक्तिदूत जी भी हैरान रह जाएँगे। दाल पहले से पिसी रखी है, पकौड़े तल देगी।

नहीं, दीदी क्यों करेगी मदद? अभी तो वह सोकर ही नहीं उठी। उठेगी, फिर तैयार होगी और तत-थई, तत-थई में लग जाएगी। कल ही तो उसके ड्रामे का पच्चीसवाँ शो खत्म हुआ है। आज नई रिहर्सल शुरू है।

वक्त से एक घंटे बाद मुक्तिदूत जी आए—चमत्कार की तरह। एकदम झकाझक सफेद खादी का कुर्ता-पाजामा पहने। आते ही 'हा-हा' हँसना शुरू। पापा बड़े प्रसन्न। मुक्तिदूत जी ने पहले उन्हें अफसरों की दृष्टिहीनता पर एक छोटा-सा दिलचस्प भाषण दिया, फिर उदाहरण—एक से एक अजीबोगरीब। गनीमत है, पापा ने बिना बिदके सुन लिया। नहीं तो कोई भरोसा नहीं, पापा कब सहसा अफसर बन जाएँ, कब साहित्य-प्रेमी। एक बार ऐसे ही किसी कवि के बेतकल्लुफी से बोलने पर पापा ऐंठ गए थे और उन्होंने त्यौरियों से बोलना शुरू कर दिया। कवि महोदय पापा को एक असफल मनुष्य बता रहे थे, जबकि पापा अपने को निहायत सफल मानते थे।

पर मुक्तिदूत जी एक तो पापा के हमउम्र हैं; दूसरे, बात करने का तरीका भी अलग है। चकित है टुनिया। पापा ने बताया था कि मुक्तिदूत जी न नौकरी करते हैं, न व्यवसाय। पर कितने अलमस्त! किसी बात की फिक्र ही नहीं। शहंशाह-सा अंदाज़, गूँजभरी आवाज़, सिगरेट पीने का दिलकश अंदाज़ और किस कदर आत्मीय! खाया उन्होंने कुछ नहीं, लेकिन चाय खूब तारीफ करके पी। पूछा, ''किसने बनाई, आपकी पत्नी ने?''

''नहीं, टुनिया ने। यह है मेरी छोटी लड़की तूर्णा। पढ़ने में बहुत तेज़ है और चाय बनाने में भी।''

''हा, हा, हा,'' मुक्तिदूत जी हँस पड़े, ''यह लड़की बहुत तरक्की करेगी। मैं तो कहता हूँ, जो अच्छी चाय बना सकता है, वह दुनिया में मुश्किल से मुश्किल काम कर सकता है।''

तभी दीदी तैयार होकर कमरे में आई। सफेद साड़ी-ब्लाउज़ में कितनी ताज़ा लग रही थी वह, फूल की तरह। रोहिणी भाटे सभी छात्राओं को सफेद वस्त्र में आने को कहती हैं। उनका कहना है कि नृत्य एक सात्त्विक क्रिया है। वह स्वयं भी सफेद रंग के कपड़े ही पहनती हैं।

मुक्तिदूत जी को नमस्कार कर दीदी ने पापा से कहा, ''पापा, हमें ठीक ग्यारह बजे पहुँचना है रोहिणी भाटे की क्लास में। आज से 'वसंत सेना' का रिहर्सल शुरू है।''

''ठीक है, चली जाना।'' पापा ने कहा।

तभी मिसेज़ रहेजा आ गईं, चार नंबर से। टुनिया के यह कहने पर कि ममी बाज़ार गई हैं, वह अंदर रसोई तक उन्हें देख आईं, फिर आकर बैठक में बैठ गईं।

उस समय पापा और मुक्तिदूत जी में बहस चल रही थी कि उत्कृष्ट साहित्य के लिए लोकप्रियता कोई शर्त हो सकती है या नहीं। मुक्तिदूत जी लोकप्रियता को व्यावसायिकता से जोड़ रहे थे, जबकि पापा उसे जनमानस से। वह बार-बार रामचरितमानस के लोकप्रिय अंश उद्धृत कर रहे थे।

मुक्तिदूत जी ने कहा, ''रामचरितमानस अपनी साहित्यिकता के कारण नहीं, धार्मिक आग्रहों के कारण लोकप्रिय है।''

मिसेज़ रहेजा बैठी रहीं कुछ देर अपनी एक एड़ी से दूसरी एड़ी खुजाती। फिर बोलीं, ''टुनिया, हमने इडली का घोल बना रखा है। साँचा दे दो तो जल्दी से इडली पक जाए।''

अब आईं न असल बात पर। यह रहेजा आंटी इतने बहाने क्यों बनाती हैं? आते ही सीधे कह देतीं कि साँचे के लिए आई हैं। इन्हें क्या पता बैठक में कौन बैठा है इस वक्त। सच, टुनिया को हैरानी होती है। कॉलोनी की सभी स्त्रियाँ एक-सी हैं—सबकी आदतें एक-सी—सुबह उठकर मेकअप कर लेना, हर वक्त खाने-पीने के बारे में सोचना, दोपहर को सोना, शाम को टी.वी. देखना और रात को घोषित करना, 'आज तो मैं बहुत थक गई।' टुनिया ऐसी कतई

नहीं बनना चाहती। वह तो ऐसी बनना चाहती है, जैसे मुक्तिदूत जी। उसे लगता है, ज़िंदगी के ज़रूरी सवालों का जवाब साहित्यकार ही ढूँढ़ सकता है।

मुक्तिदूत जी जानना चाहते थे कि क्या माधव मिश्रा अभी भी इस कॉलोनी में रहते हैं?

"रहते हैं," पापा ने बताया, "आजकल बहुत उदास हैं। कहीं आते-जाते नहीं। हाल ही में उनकी पत्नी का देहांत हो गया।"

"अकस्मात्?"

"नहीं, कैंसर था।"

"मैं तो उनका घर भूल गया हूँ। कोई आठ बरस पहले आया था एक बार। किस नंबर में हैं?"

"एक सौ आठ। इस ब्लॉक से हटकर उधर तीसरी सड़क के मोड़ पर जो क्वार्टर बने हैं, उनमें।"

"कहाँ भई?"

"टुनिया बता देगी, जानती है। टुनिया बेटी, ज़रा मुक्तिदूत जी को माधव मिश्रा जी के घर पहुँचा दो।" पापा बोले।

"भई, लेकिन लौटकर हम एक चाय और पिएँगे।"

"ज़रूर-ज़रूर।" पापा की मुस्कान खिल गई। पापा को और क्या चाहिए? उनका मन तो बस स्वागत-सत्कार के लिए बना है। वश चले तो सारा दिन, सारी रात दरवाज़ा खोले बैठे रहें, आगंतुकों के इंतज़ार में। उनकी भूख-प्यास मित्रों के साथ बँधी है। साथ में कोई खाने वाला न हो तो तीन बजे तक खाने की सुध न लेंगे। कोई आ जाए तो बारह बजे से ही भूख लग जाएगी।

टुनिया ने ज़रा भी देर नहीं लगाई। फौरन स्लिपर्स पहने और चल दी मुक्तिदूत जी के साथ। बाप रे, कितने लंबे हैं, ताड़ की तरह। बात करते समय अगर इनकी तरफ देखना हो तो गर्दन में बाँयटा पड़ जाए।

मुक्तिदूत जी ने देखा, टुनिया उनके साथ लगभग भागते हुए चल रही है। उन्होंने रफ्तार धीमी कर दी। पूछा, "यह तुम्हारी बहन थी न?"

"आपको कैसे पता?"

"वाह, तुमसे इतनी मिलती जो है।"

टुनिया ने शायद गलत सुना है या मुक्तिदूत जी ने ही गलत कहा है।

"सब तो कहते हैं, मुझसे ज़रा भी नहीं मिलती।"

"बहुत मिलती है। तुम्हें पता है तूर्णा, भगवान् के पास सबसे बेहतरीन

प्रिंटिंग प्रेस है। इंसान लाख कोशिश करे, वह बात पैदा नहीं कर सकता जो भगवान् कर सकता है। जैसे किताबें छपती हैं, सब एक-सी, इसी तरह भगवान् हर खानदान के नाक-नक्श के ब्लॉक प्रिंट करते हैं। तभी न जानकार लोग कहते हैं, 'अरे बबुआ, तेरी नाक तो बिलकुल दादी पर गई है, तेरी हँसी में तो बुआ की छवि है।' ईश्वर एक बढ़िया मुद्रक है।"

अपनी ही बात पर मुक्तिदूत जी 'हा-हा' कर हँस दिए। टुनिया के मुँह से फौरन निकला, "आप भगवान् को मानते हैं?"

"क्यों, ऐसा तुम्हें क्यों लगा कि भगवान् को मानने वाले कम होते जा रहे हैं?"

"पता नहीं, एक बार पापा ने कहा था, लोग ज्यों-ज्यों पढ़े-लिखे बन रहे हैं, उनकी भगवान् पर से आस्था हिल रही है।"

"यह तो पापा ने कहा था, तुम क्या कहती हो?"

"मुझे भी ऐसा ही लगता है।"

"नहीं, पापा को ऐसा लगता है, इसलिए तुम्हें ऐसा लगता है। टुनिया रानी, अलग से सोचो, क्या हमारे देश में कभी ईश्वर से विश्वास खत्म हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचोबीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूँ सिंदूर में रंगकर और खुद उस पर जाकर दो फूल चढ़ा आऊँ। फिर देखना तुम, अपने लोगों की कितनी आस्था है। दस में से नौ आदमी यहाँ रुकेंगे, मत्था टेकेंगे, फूल-फल चढ़ाएँगे। इसे कहते हैं आस्था।"

"या अंधविश्वास!"

"नहीं, विश्वास। वैसे विश्वास और अंधविश्वास में बड़ा महीन-सा फर्क होता है। तुम अभी बहुत छोटी हो, वरना तुम्हें समझाता।"

"आ गई न वही बात! यह छोटी होना तो बवालेजान हो गया है। अच्छी-खासी बात समझ आ रही थी कि ब्रेक लग गया, अभी तुम बहुत छोटी हो।" इस वक्त मुक्तिदूत जी मेहमान हैं, वरना टुनिया पूछती, 'छोटों को बड़ा बनने के लिए क्या करना पड़ता है? क्या सिर के बल खड़ा होना पड़ता है?'

मुक्तिदूत जी ने गौर से उसकी ओर देखा, "थक गई?"

"नहीं," टुनिया ने गर्दन हिलाई।

"किस क्लास में पढ़ती हो?"

"क्या नाम है स्कूल का?"

"कैसे जाती हो इतनी दूर?"

लीजिए, आ गया माधव मिश्रा का घर।
मिश्रा जी घर पर हैं।
टुनिया का काम खत्म।
जाएगी।

मुक्तिदूत जी अब मिश्रा जी से बातों में मशगूल हो जाएँगे। दोनों साहित्यकार, दोनों बातूनी। जानती है टुनिया कि मुक्तिदूत जी को कौन-सा याद रहेगा कि वह किस क्लास में पढ़ती है, कैसे स्कूल जाती है, स्कूल का नाम क्या है। बच्चों से ऐसी बातें सभी पूछते हैं और सभी भूल जाते हैं। पापा के एक दोस्त हर बार उससे उसका नाम पूछते हैं और हर बार भूल जाते हैं।

पापा का खयाल है, चाय के बाद मुक्तिदूत जी को खाना भी खिलाया जाए। और क्या? बारह बजे हैं, चाय पिलाते एक-डेढ़ बज जाएँगे।

ममी सनीचरी से अभी लौटी नहीं हैं। लौटकर भन्नाएँगी, 'बस, शुरू हो गईं इनकी दावतें। इतना ही शौक था खिलाने का तो किसी हलवाइन से शादी कर लेते। सारा दिन बैठी रहती भट्ठी पर। बाज़ार से धूप में तपते आओ और मरो चूल्हे पर!'

टुनिया उनके आने से पहले कुछ बना लेती। पर क्या? उसे आलू की तरकारी के सिवा कुछ बनाना आता ही नहीं। दीदी होती तो उसकी खुशामद कर टुनिया पनीर निकलवा लेती। पनीर-आलू की सब्ज़ी बन जाती। पर दीदी तो रिहर्सल के लिए जा चुकी।

चलो, जैसा बुरा-बावरा आता है, बनाएगी टुनिया। पापा को 'ना' न कहेगी। खराब बनेगा तो 'सॉरी' कह देगी। ढेर-सा सलाद काट देगी। चटनी-अचार सब रखा है, दे देगी। मिठाई पापा मँगा ही लेंगे।

ममी के लिए नहीं छोड़ेगी कोई काम। एक तो ममी थकी हुई लौटेंगी; दूसरे, उन्हें गुस्सा आएगा। अगर ममी पसंद करें तो छुट्टी वाले दिन टुनिया सारे घर का खाना बना दे। पर पसंद ही तो असली बात है। ममी को किसी के हाथ का बना खाना अच्छा नहीं लगता। कई नौकरों की मम्मी छुट्टी कर चुकी हैं। कोई चपाती मोटी बनाता था, तो कोई सब्ज़ी पतली बनाता। किसी की उन्हें सफाई नापसंद थी, तो किसी की हाथ की सफाई। ममी बहुत स्वादिष्ट भोजन बनाती हैं, पर किसी को सिखाना उनके वश की बात नहीं। झींकने लगती हैं।

मुक्तिदूत जी आए। पहले चाय पी। पापा ने खाने के लिए आग्रह किया। सहज भाव से वह रुक गए।

टुनिया ने अकेले हाथ सारा इंतज़ाम किया। वह दौड़-दौड़कर गर्म फुलका खिला रही थी। उसे बिलकुल कष्ट नहीं हो रहा था। मुक्तिदूत जी कब-कब आते हैं!

"आपकी लड़की की आवाज़ बहुत अच्छी है, इसका रेडियो ऑडिशन क्यों नहीं करवाते?" मुक्तिदूत जी ने कहा।

पापा उत्साह और गर्व से बताने लगे, "उसे समय ही कहाँ है रेडियो के लिए! फिर रेडियो में वे कलाकार जाते हैं जो मंच अथवा टी. वी. पर अयोग्य सिद्ध होते हैं। रेडियो तीसरी श्रेणी की प्रतिभाओं के लिए है। यह तो स्टेज की नामी कलाकार है। आए दिन इसके शो होते रहते हैं। बल्कि एक बार फिल्मों के लिए भी प्रस्ताव मिला। काफी नामी प्रोड्यूसर का था। लेकिन आप जानते ही हैं, बच्ची को वहाँ फँसाना तो बिलकुल गलत है। दो साल से कत्थक सीख रही है। कॉलेज भी जाना रहता है। पढ़ाई में हरदम अव्वल आती है।"

"कौन, यह टुनिया?"

"यह तो अभी बिलकुल मूर्ख है। कुछ नहीं आता। वह मेरी बड़ी बेटी पपीहा।"

"नहीं सहाय साहब, मैं इसकी बात कर रहा हूँ, आपकी छोटी लड़की की। इसकी आवाज़ में एक संस्कार है। आजकल बहुत कम दिखाई देता है।"

फुलका लाते हुए टुनिया ने सुना, 'आपकी छोटी लड़की···'

सहसा विश्वास नहीं हुआ टुनिया को। इस घर में हमेशा दीदी की जय-जयकार हुई है। दीदी के गाने पर तालियाँ बजी हैं, दीदी के नृत्य पर बधाई मिली है। दीदी के प्रमाणपत्र मढ़ाए गए हैं। दीदी महान् है। दुनिया से कोई पूछे, दीदी क्या है!

पानी का जग लाते-लाते टुनिया के कानों में मुक्तिदूत जी की आवाज़ पड़ी है, "सहाय साहब, आवाज़ से आप किसी की पूरी शख्सियत जान सकते हैं। सच्चे-खरे इंसान की आवाज़ नाभि से उत्पन्न होती है और उदर से टकराती हुई, एक समूची संस्कृति का दस्तावेज़ बन कंठ से निकलती है। आपकी छोटी लड़की की आवाज़ में यह सब है। उसकी आवाज़ एक समूची संभावना है।"

टुनिया का अंग-अंग सितार-सा झनझना उठा। क्या यह सच है? क्या यह सब उसी के लिए कह रहे हैं? बहुत मज़ाक करते हैं न। लेकिन हँस तो नहीं रहे। मज़ाक के मूड में तो नहीं दिखते। गंभीर होकर बोल रहे हैं। इतने बड़े साहित्यकार झूठ क्यों बोलेंगे? शायद झूठ ही होगा। यों ही उसे खुश कर रहे

हैं या पापा की खुशामद कर रहे हैं? खुशामदी तो नहीं लगते।

वह उनके सामने बोली ही कहाँ, वे ही बोलते रहे। क्या उन छोटे-छोटे अस्फुट जवाबों में से ही उन्होंने यह मणि ढूँढ़ निकाली? टुनिया ने सोचा था, उन्होंने उसे मूर्ख मानकर ही ज़्यादा बात नहीं की।

पापा गर्दन हिलाते हुए उनके आगे मिठाई की प्लेट बढ़ाने लगे। पापा ने अपनी परिवार-प्रशस्ति शुरू कर दी, "हमारे घर में सभी की आवाज़ बहुत अच्छी है। मेरे पिताजी की आवाज़ भी बहुत अच्छी थी। जब वे सस्वर रामायण-पाठ करते थे तो सारा मुहल्ला आ जाता था सुनने। भीड़ सँभालना मुश्किल हो जाता था। पपीहा की आवाज़ तो सबसे अच्छी है। क्या बताएँ, आज होती तो आपको उसका गाना सुनवाते!"

कुछ नहीं लेना-देना टुनिया को इस परिवार-पुराण से। अब लाख बार घरवाले उससे चाय बनवाएँ, पानी मँगवाएँ, सब्ज़ी कटवाएँ, कुछ नहीं व्यापेगा उसे। उसे आज यह कैसी संपदा मिल गई है? उसके कानों में ठुमरी-सी छोटी यह बात किस कदर ठुमक रही है, 'आपकी छोटी लड़की···आपकी छोटी लड़की।'

वसंत—सिर्फ एक तारीख

सच पूछो तो मैं महीनों बाद घर से निकली थी। यानी, चौक से आगे। चौक तक के तो दिन में दस चक्कर रोज़ ही लग जाते थे। बेसन से लेकर बॉर्नविटा तक की खरीदारी मेरे ही ज़िम्मे थी। यहाँ तक कि अब मैं आँख मूँदकर चलूँ, तब भी बता सकती हूँ कि यह मलाईवाली का चबूतरा है, यह गुलाब का चाट-ठेला है, यहाँ पर एक पागल आदमी बैठता है और यहाँ होम्योपैथिक डॉक्टर की उजाड़ दुकान, यहाँ गर्म इमरती हर वक्त छनती है और यहाँ भाँग की गोली मिलती है। आगे पुराना बजाजा है। उससे आगे टोकरियाँ बिकती हैं, नीम के नीचे मिर्च-मसाले और उससे आगे धागे मिलते हैं। ठहरिए, बीच में कीलवाले की दुकान तो छूट ही गई। यहाँ चौक से संगम जाने के लिए रिक्शे सस्ते मिलते हैं और दातुनें भी। यहीं से एक तरफ सब्ज़ी बाज़ार शुरू होता है, दूसरी तरफ मिठाई बाज़ार।

लेकिन यों ठीक से तैयार होकर तो मैं महीनों बाद निकली थी। मैंने सोचा था, लोग मुझे देखकर सवालों का ताँता लगा देंगे, 'कहाँ जा रही हो?', 'कैसे निकलना हुआ?', 'खैरियत तो है?' वगैरह-वगैरह। लेकिन बिजलीघर तक पहुँचते-पहुँचते मैंने पाया, लोगों को फुर्सत नहीं है। लोग बेतहाशा भागे जा रहे हैं—साइकिलों पर, स्कूटरों पर, रिक्शों में। वे न आपस में बोल रहे हैं, न इधर-उधर देख रहे हैं। बस, भागे जा रहे हैं। उनके ठीक सिर के ऊपर नीले आसमान में एक गुनगुना बादल ठुमक रहा है। लेकिन वे भागे जा रहे हैं। सड़क के उस पार एक बारजे में एक बेहद प्यारी बच्ची लाल मफलर बाँधे खड़ी हँस रही है, लेकिन वे भाग रहे हैं।

ये वसंत के दिन थे। ऋतुराज का महीना। जगह-जगह गुलाबी, पीले, नीले फूल सिर उठाकर खिलखिला रहे थे। सड़क के किनारे की पटरियों की दरारों तक में घास फूट आई थी। लोग अभी भी भाग रहे थे। मैं डर गई। कहीं शहर ही तो खाली होने नहीं जा रहा? क्या कोई महामारी फैलने वाली है या भूचाल